

देश की सड़कों और सार्वजनिक स्थानों पर भी सुरक्षित नहीं महिलाएँ

डॉ. विश्वास तिवारी

सुप्रीम

कोर्ट ने दिल्ली एनसीआर में हाल ही में सामने आए दुष्कर्म और यौन उत्पीड़न के मामलों को लेकर स्वतः सज़ान लेकर सुनवाई शुरू की। इसमें कोर्ट ने महिलाओं की सुरक्षा को लेकर सख्त रूख अपनाया। अदालत ने केंद्र सरकार और दिल्ली पुलिस से कहा कि राजधानी में ऐसी सुरक्षा व्यवस्था होनी चाहिए कि हर महिला सार्वजनिक जगहों और सार्वजनिक परिवहन का इस्तेमाल करते समय रात 10 बजे भी सुरक्षित महसूस करें। अदालत ने कहा कि अपराधी में ऐसा खौफ पैदा करें कि उसे लगना चाहिए कि अगर वो पकड़ा गया तो इस बार वो गया। देश में महिलाओं के खिलाफ होने वाले अपराध संबंधी कानून कठोर होने के बाद भी ऐसे अपराध कम होने का नाम ही नहीं ले रहे हैं। ऐसा क्यों हो रहा है इस पर पुलिस के साथ-साथ न्यायाधिक तंत्र को भी गंभीरता से विचार करना चाहिए। यह स्थिति सिर्फ दिल्ली की नहीं बल्कि पूरे देश में होनी चाहिए। भारत में महिलाओं के विरुद्ध अपराध कोई नई बात नहीं है। यह एक पुरानी समस्या है जो हर कुछ वर्ष बाद किसी न किसी जघन्य घटना से पूरे देश को हिला देती है। फिर नारे लगते हैं, प्रदर्शन होते हैं, कानून और सख्त होता है और कुछ महीनों बाद सब फिर शांत हो जाता है। ऐसी ही अंतर आत्मा को झकझोरे वाली कुछ घटनाएं आज भी ताजा हैं। दिसंबर 2012 में दिल्ली में हुआ निर्या कांड ने पूरे देश को हिला दिया था जिसमें विरोध प्रदर्शन के बाद फॉस्ट ट्रेक अदालतें बनीं, कानून बदले, निर्भया कोष बनाए गए, सजा और कठोर हुई। फिर 2012 का उन्नाव मामले आया जिसने बता दिया कि जब आरोपी सत्ता पक्ष के करीब हो तो सबूत कैसे कमजोर पड़ते हैं, पीड़िता के परिवार को कैसे तोड़ा जाता है। 2020 का हाथरस कांड जाति, पुलिस की लापरवाही और शव के अंतिम संस्कार को लेकर विवादों से भरा रहा।

अगस्त 2024 में कोलकता के आरजी अस्पताल में ड्यूटी के बाद आराम कर रही एक युवा डॉक्टर की बलात्कार के बाद की गई हत्या ने पूरे चिकित्सा समुदाय को सड़कों पर ला दिया। प्राथमिकी दर्ज करने में देरी, सबूतों से छेड़छाड़, अस्पताल प्रशासन की लीपापोती और राजनीतिक आरोप-प्रत्यारोपों ने जांच को जटिल बना दिया।

अतिथि से स्थायी तक: 7000 खाली पदों का दर्द

प्रदेश

को उच्च शिक्षा विभाग की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि 570 से अधिक शासकीय महाविद्यालयों में करीब 7000 स्थायी सहायक प्राध्यापकों के पद खाली हैं। औसतन हर कॉलेज में 12 से अधिक शिक्षकों की कमी है। इस कमी को पिछले कई वर्षों से लगभग 4 हजार अतिथि विद्वान संभाल रहे हैं। वे पढ़ाते हैं, परीक्षाएं कराते हैं और कॉपीयां जांचते हैं, लेकिन हर साल उन्हें नए सिर से नौकरी के लिए आवेदन करना पड़ता है।

सरकार ने अब ऐसी व्यवस्था बनाई है, जिसके तहत अतिथि विद्वान को उसी कॉलेज में खाली स्थायी पद पर प्राथमिकता दी जाएगी, जहां वह पढ़ा रहा है। उसे दूरराज्य के कॉलेज में नहीं भेजा जाएगा। वहीं, फिलहाल 949 पदों पर नई भर्ती की प्रक्रिया शुरू की गई है। इसमें हिंदी, अंग्रेजी, वाणिज्य, इतिहास, भूगोल, राजनीति विज्ञान, भौतिकी और रसायन विज्ञान जैसे प्रमुख विषय शामिल हैं। ये कदम राहत देने वाले हैं, लेकिन प्रदेश की जरूरतों के लिहाज से पर्याप्त नहीं हैं।

7000 पदों का खाली होना केवल प्रशासनिक आंकड़ा नहीं, बल्कि लाखों विद्यार्थियों के भविष्य से जुड़ा प्रश्न है। जब कॉलेजों में स्थायी शिक्षक ही नहीं होंगे, तो शोध, सेमिनार और नई शिक्षा नीति का प्रभावी क्रियान्वयन कैसे होगा? राष्ट्रीय मूल्यांकन के दौरान निर्यात फैकल्टी की स्थिति भी महत्वपूर्ण होती है। शिक्षकों की कमी से कॉलेजों की ग्रेडिंग प्रभावित होती है, अच्छे विद्यार्थी प्रवेश लेने से कतराते हैं और कंपनियां की प्लेसमेंट में रुचि भी घट सकती है। इस तरह शिक्षा की गुणवत्ता पर प्रतिकूल असर पड़ता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में स्थिति और गंभीर है। कई कॉलेजों में विज्ञान प्रयोगशालाएं हैं, लेकिन प्रयोग कराने के लिए स्थायी शिक्षक नहीं हैं। कहीं एक ही अतिथि विद्वान को तीन-तीन विषय पढ़ाने पड़ते हैं। ऐसे में विद्यार्थियों को विषय विशेषज्ञों से नियमित मार्गदर्शन नहीं मिल पाता। अतिथि विद्वान की स्थिति भी कम चिंताजनक नहीं है। उसे प्रति पीरियड के हिसाब से भुगतान मिलता है और इसकी अधिकतम सीमा तय होती है। गर्मी की छुट्टियों में दो महीने तक वेतन नहीं मिलता। न मेडिकल सुविधा है, न भविष्य निधि जैसी सामाजिक सुरक्षा। इसके बावजूद वह स्थायी प्राध्यापक की तरह कर्तव्य लेने, प्रवेश शिक्षकों संभालने और परीक्षा ड्यूटी निभाने जैसे काम करता है। अस्थायी कमी दूर करने के लिए शुरू हुई व्यवस्था पिछले



इस प्रकरण में उच्च न्यायालय को जांच सीबीआई को सौंपनी पड़ी थी। ये घटनाएं अलग-अलग राय्यों की हैं। इन सब में एक चीज समान है वो है जांच में देरी, सबूतों से छेड़छाड़ और पीड़िता का अकेले पड़ जाना। इन सब मामलों की जांच में सबसे बड़ा अवरोध है राजनीतिक दल का प्रभाव, स्थानीय दबंग या विधायक। गवाह पलट जाते हैं, परिवार को समझौते का दबाव ड़ेलना पड़ता है और मीडिया के शांत होते ही केस फाइलों में दब जाता है। दूसरा बड़ा अवरोध है न्यायाधिक प्रक्रिया की धीमी गति। बलात्कार के मामलों में अदालत में अभी भी 90 प्रतिशत मामले लंबित है। विशेष अदालतों, फॉस्ट ट्रेक कोर्ट कागजों में तो तेज है, परंतु असल में बलात्कार और पोक्सो के ढाई लाख से अधिक मामले आज भी लंबित हैं।

कुछ ही दिन पूर्व दिल्ली विश्वविद्यालय की छात्राओं ने प्रदर्शन किया जिसमें उनके द्वारा लगाए गए नारों पर सवाल उठाए जा रहे हैं। ‘एक कचौड़ी दो समोसा, इन मर्दों का क्या भरोसा।’, ‘मेरे सिर में दर्द है, जिसका कारण मर्द है।’ इन नारों पर सवाल उठे कि इनमें सभी मर्दों को क्यों लपेटा गया? यह सब पढ़ी-लिखी छात्राएं हैं, लेकिन हमें इन छात्राओं की मनोस्थिति को भी समझना होगा। सार्वजनिक स्थानों पर, परिवहन में और स्कूल कॉलेजों में जाना भी अगर मुश्किल हो जाए तो फिर ऐसी प्रतिक्रिया आना सामान्य है। पिता अपनी बेटी की शादी तो धूमधाम से करता है, परंतु अपनी जायदाद में हिस्सा नहीं देता है, भाई जो रक्षा बंधन पर अपनी बहन की रक्षा करने का वचन देता है वो भी अपनी बहन के पहनावे और बाहर जाने के समय पर प्रतिबंध लगाता है। ऐसे में देश में महिलाओं को समान भागीदारी देने की

बात खोखली लगती है। नैतिकता और संस्कार के नाम पर महिलाओं के कार्यों पर, उसकी दोस्ती पर रोक लगाया इस लोतांत्रिक व्यवस्था में अनुचित है। समाज का एक वर्ग में आज भी महिलाओं को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखकर एक वस्तु के रूप में देखता है। कई शहरों के कई स्थानों पर रात को सड़क पर उचित प्रकाश व्यवस्था न होना और सुनसान रास्ते अपराधियों को बढ़ावा देते हैं। इस बढ़ती असुरक्षा का सीधा असर महिलाओं की आजादी और देश के विकास पर पड़ता है। इस खौफ के कारण कई लड़कियां अपनी उच्च शिक्षा और नौकरी के बेहतर अवसर को छोड़ देती हैं और ऐसी घटनाओं से विश्व में भी भारत की विपरीत छवि बनती है। जब देश की आधी आबादी सड़कों पर सुरक्षित नहीं होगी तब एक आत्मनिर्भर भारत की कल्पना अधूरी है। हमारे देश में अकसर सड़कों पर महिलाओं के साथ छेड़छाड़ होने पर आसपास खड़े लोग मुक दर्शक बने रहते हैं। ऐसे में यह अपराधियों का हौसला और बढ़ता है। सरकार को स्कूल, कॉलेज, पार्क, बस स्टैंड और रेल्वे स्टेशनों पर पुलिस की गश्त और बढ़ानी चाहिए। इसके अलावा संवेदनशील इलाके में सीसीटीवी कैमरे और आपतकालीन पैनिक बटन लगाए जाने चाहिए।

उसे स्कूल कॉलेज से ही आत्मसुरक्षा का प्रशिक्षण देना चाहिए ताकि विषम परिस्थितियों में वह बहादुरी से मुकाबला कर सके। यह केवल प्रशासनिक विफलता नहीं है, बल्कि एक सामाजिक कलंक भी है। इसे केवल कानून के भरपेसे नहीं रोका जा सकता है। जब तक हर नागरिक महिलाओं की सुरक्षा को अपनी जिम्मेदारी नहीं समझेगा, तब तक देश की सड़कें सुरक्षित नहीं होंगी।

नईदुनिया

सौ सुनार की, एक लोहार की: अमित शाह के दांव से बदला सियासी विमर्श त्योहारी सीजन में सड़क पर सियासत से किसे नुकसान ?

नवरात्रि, दशहरा और दीपावली हिंदुओं के सबसे बड़े त्योहार हैं। इन त्योहारों से केवल मंदिरों में घंटियां नहीं बजतीं, बल्कि बाजारों की रौनक भी लौटती है। व्यापारी पूरे साल खरीदारी के इस सीजन की प्रतीक्षा करते हैं। दिल्ली केवल राजधानी नहीं है, बल्कि देश का सबसे बड़ा बिजनेस हब भी है।

पिछले सप्ताह राहुल गांधी के लगातार सड़कों पर आंदोलन करने से दिल्ली के व्यापारियों में भारी नाराजगी देखी गई। जंतर-मंतर पर रोजाना प्रदर्शन से कॉनॉट प्लेस, चांदनी चौक और करोलबाग तक के कारोबार पर असर पड़ा। ग्राहक बाजार आने से कतराने लगे। व्यापारी संगठनों ने तो जंतर-मंतर को विरोध प्रदर्शन के लिए निर्धारित स्थल की सूची से हटाने की मांग तक कर दी। सुप्रीम कोर्ट ने भी इस पर टिप्पणी करते हुए कहा कि विरोध प्रदर्शन के लिए नए स्थान तलाशने चाहिए।

अब सरकार ने जंतर-मंतर को विरोध प्रदर्शन के स्थलों की सूची से हटा दिया है। यह केवल प्रशासनिक फैसला नहीं है, बल्कि एक बड़ा राजनीतिक संदेश भी है कि त्योहारी सीजन में सड़कों पर कब्जा कर आम हिंदू की आस्था और व्यापारी की रोजी-रोटी में बाधा नहीं बनने दी जाएगी। ऐसा लगता है कि राहुल गांधी और उनके गठबंधन के सहयोगी अब उनके सवैंगे, क्योंकि जनता का मूड उत्सव का है, विरोध का नहीं।

राहुल गांधी पिछले कई महीनों से वोट चोरी का नैरेटिव बना रहे थे। उनका आरोप था कि चुनाव आयोग भारतीय जनता पार्टी के इशारे पर काम कर रहा है और मतदाता सूची से नाम काटा जा रहे हैं। उन्होंने इसके लिए सड़कों पर मार्च किया, प्रेस कॉन्फ्रेंस कीं और सुप्रीम कोर्ट तक का रुख किया। भाजपा तब तक उनके आरोपों को झूठा और अराजकतावादी बोलकर बचाव कर रही थी, लेकिन जब राहुल गांधी का अभियान चरम पर पहुंचा, तब केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह ने ‘सौ सुनार की, एक लोहार की’ शैली में एक ही वार किया। उन्होंने राहुल गांधी के पूरे वोट चोरी अभियान को तुष्टिकरण का एजेंडा और घुसपैठिया बचाओ राजनीति करते आए हैं, वहीं भाजपा



एक बयान नहीं था, बल्कि नैरेटिव की पूरी दिशा बदलने वाला दांव था। राहुल गांधी जिसे वोट चोरी बता रहे थे, उसे अमित शाह ने घुसपैठियों को बचाने की कार्ययोजना बता दिया और यहीं से पूरी बहस का केंद्र बदल गया।

एसआईआर यानी विशेष गहन पुनरीक्षण प्रक्रिया को लेकर विपक्ष का आरोप था कि सरकार मुसलमानों के नाम मतदाता सूची से हटा रही है, लेकिन सरकार और चुनाव आयोग का तर्क बिल्कुल अलग है। उनका कहना है कि मतदाता सूची से केवल उन नामों को हटाया जा रहा है, जो भारत के नागरिक ही नहीं हैं। घुसपैठिए हर राज्य की समस्या हैं। असम, बंगाल, बिहार, दिल्ली और मुंबई, हर जगह अवैध रूप से रह रहे लोगों के कारण स्थानीय लोगों के रोजगार और संसाधनों पर दबाव बढ़ रहा है। भाजपा इसके बहाने अपने हिंदू वोट बैंक को स्पष्ट संदेश देने की कोशिश करती है कि वह उनके अधिकारों की रक्षा कर रही है।

बंगाल में एसआईआर के दौरान कई वीडियो वायरल हुए थे, जिनमें देखा गया था कि जांच शुरू होते ही कई लोग बांग्लादेश की ओर भाग रहे थे। इन वीडियो को घुसपैठ की समस्या की गंभीरता के प्रमाण के रूप में पेश किया गया। राहुल गांधी इसे वोट चोरी बता रहे हैं, जबकि अमित शाह इसे देश की सुरक्षा से जोड़ रहे हैं। यह लड़ाई आज की नहीं है, बल्कि विचारधारा का बहुत पुराना संघर्ष है। कांग्रेस और उसके सहयोगी दल का इंसान वोट बैंक के लिए खुलकर न केवल खड़ी होती है, बल्कि काम करती हुई भी दिखाई देती है।

ईरान पर ‘मदर ऑफ ऑल बम्स’ का साया

अमेरिका

और ईरान के बीच बढ़ते तनाव के बीच दुनिया की नजरें वाशिंगटन की सैन्य रणनीति पर टिकी हैं। ईरान के परमाणु और उर्जा ठिकानों पर अमेरिका के सबसे शक्तिशाली गैर-परमाणु हथियार जीबीयू-43/वी, यानी ‘मदर ऑफ ऑल बम्स’, से हमले की संभावना को लेकर चर्चाएं हो रही हैं। हालांकि, इसके इस्तेमाल की किसी योजना की आधिकारिक पुष्टि और अटकलों के बीच अंतर करना जरूरी है। सवाल केवल इस बम की विनाशकारी क्षमता का नहीं, बल्कि इसके संभावित भू-राजनीतिक परिणामों का भी है।

करीब 9,800 किलोग्राम वजनी इस बम में लगभग 8,500 किलोग्राम विस्फोटक सामग्री होती है। वर्ष 2003 में इसके परीक्षण के बाद इसे अमेरिकी सैन्य शक्ति के प्रतीक के रूप में देखा गया। यह जमीन से ठहराने से पहले हवा में विस्फोट कर व्यापक क्षेत्र में दबाव और तबाही पैदा करता है। अमेरिका ने अप्रैल 2017 में अफगानिस्तान में इस्लामिक स्टेट के ठिकानों के खिलाफ इसका इस्तेमाल किया था। हालांकि, इसकी विनाशकारी क्षमता के साथ इसकी सीमाओं से समझना भी जरूरी है।

भूमिगत ठिकानों पर सीमित असर: मदर ऑफ ऑल बम्स को गहरे भूमिगत ठिकानों को भेदने के लिए विकसित नहीं किया गया है। इसकी प्रभावशीलता



मुख्यतः खुले क्षेत्रों, सतह पर मौजूद सैन्य संरचनाओं और सुरगों के प्रवेश द्वारों के आसपास अधिक हो सकती है। ईरान का फोर्डो परमाणु केंद्र पहाड़ के भीतर गहराई में स्थित है। ऐसे मजबूत भूमिगत ठिकानों के लिए अमेरिकी का पास जीबीयू-57 जैसे विशेष बंकर भेदी बम भी हैं। इसलिए मदर ऑफ ऑल बम्स के इस्तेमाल की चर्चा के पीछे सैन्य कार्रवाई के साथ मनोवैज्ञानिक दबाव बनाने का उद्देश्य भी हो सकता है।

सैन्य रणनीति और घरेलू राजनीति: राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के प्रशासन के लिए ईरान के परमाणु कार्यक्रम पर दबाव बनाना रणनीतिक प्राथमिकता हो सकता है। इजरायल भी लंबे समय से इसे अपनी सुरक्षा के लिए गंभीर खतरा बताता रहा

है। ऐसे में अमेरिकी सैन्य शक्ति का प्रदर्शन ईरान को बातचीत के लिए तैयार करने की कोशिश हो सकता है। लेकिन सैन्य दबाव हमेशा अपेक्षित परिणाम नहीं देता। हमले से ईरान का परमाणु कार्यक्रम पूरी तरह समाप्त हो जाएगा, इसकी गारंटी नहीं है। इसके विपरीत, ईरान अपने कार्यक्रम को अधिक गोपनीय बनाने और प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने की दिशा में आगे बढ़ सकता है।

भारत पर भी पड़ सकता है असर: किसी बड़े हमले का सबसे गंभीर आर्थिक प्रभाव हॉर्मुज जलडमरूमध्य पर पड़ सकता है। वैश्विक तेल आपूर्ति का लगभग पांचवां हिस्सा इसी मार्ग से गुजरता है। यहां जहाजों की आवाजही बाधित होने पर कच्चे तेल की कीमतों में

एसआईआर को लेकर सुप्रीम कोर्ट पहले ही अपना रुख स्पष्ट कर चुका है। अदालत ने कहा है कि मतदाता सूची को शुद्ध करना चुनाव आयोग का संवैधानिक दायित्व है। नई याचिकाओं में जो तकनीकी मुद्दे उठाए जा रहे हैं, उन पर भी अदालत जल्द निर्णय देगी। लेकिन राजनीतिक लड़ाई अदालत के फैसले से खत्म नहीं होगी। यह लड़ाई विचारधारा की है। एक विचारधारा पर कांग्रेस ने पचास साल से ज्यादा सरकार चलाई है, तो दूसरी विचारधारा पर भाजपा अब तीसरे कार्यकाल में है। यदि धुवीकरण भाजपा को मजबूती दे रहा है, तो उसे वोट चोरी जैसे आरोपों से कमजोर नहीं किया जा सकता।

राहुल गांधी और उनके सहयोगियों के वोट चोरी अभियान को घुसपैठिया बचाओ कार्यक्रमोजना बताना कोई आकस्मिक बयान नहीं है, बल्कि यह साक्ष्य-समझा वैचारिक एजेंडा है। कश्मीर से धारा 370 हटाना, अयोध्या में राम मंदिर का निर्माण, समान नागरिक संहिता लागू करना और घुसपैठियों को देश से बाहर निकालना, ये चारों भाजपा के घोषित बुनियादी एजेंडे रहे हैं।

राहुल गांधी सहित पूरा विश्व एसआईआर को मुद्दा बनाकर भाजपा के ही ट्रैप में आ गया है, क्योंकि जैसे ही घुसपैठियों का मुद्दा उछलता है, वैसे ही हिंदू मतदाता एडजुस्ट होने लगता है। राजनीति में हिंदुत्व की धारा ने घुसपैठियों के पक्ष में खड़ी दिखाई देने वाली राजनीतिक धारा को संकट में डाल दिया है। राजनीतिक अस्तित्व को खतरे में देखकर कई दल अब वैचारिक नक्सलवाद की ओर बढ़ रहे हैं।

‘सौ सुनार की, एक लोहार की’ कहानत इस पूरे घटनाक्रम पर सटीक बैठती है। राहुल गांधी ने महीनों तक वोट चोरी का नैरेटिव बनाने के लिए सौ हथौड़े मारे, लेकिन अमित शाह ने एक ही वैचारिक हथौड़े से पूरे नैरेटिव को तुष्टिकरण और घुसपैठिया बचाओ अभियान में बदल दिया। अब लड़ाई वोट चोरी की नहीं, बल्कि इस सवाल पर आ गई है कि देश का नागरिक कौन है और घुसपैठिया कौन। यही भाजपा की सबसे बड़ी वैचारिक जीत है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)